दैनिक भास्कर

Date:02-03-24

खेलों, खिलाड़ियों के प्रति भेदभाव खत्म होना चाहिए

संपादकीय

एक क्रिकेट खिलाड़ी ने राजनीति के चलते एक राज्य की तरफ से खेलने से कान पकड़ लिया, महिला हॉकी कोच ने लिंग-भेद का आरोप लगाकर रोते हुए इस्तीफा दिया, हॉकी इंडिया के सीईओ ने गुटबाजी के चलते पद छोड़ा। यही नहीं, क्रिकेट में भी महिला खिलाड़ियों को वह सम्मान नहीं मिलता, जो पुरुष खिलाड़ियों को मिलता है। महिला हॉकी कोच ने कहा कि महिला खिलाड़ियों के साथ प्रबंधन उपेक्षापूर्ण व्यवहार करता रहा है। संभव है यह आरोप वह व्यक्तिगत कारणों से लगा रही हों क्योंकि ओलिंपिक के लिए क्वालिफाई न कर पाना भारतीय महिला हॉकी टीम के लिए शर्मनाक रहा। लेकिन क्या एक सीरीज में अच्छा प्रदर्शन न करना कोच या खिलाड़ियों के प्रति उदासीनता का कारण हो सकता है? क्रिकेट मैचों के कवरेज में भी लिंगभेद साफ दिखाई देता है। अब समय आ गया है जब लड़कियों को लालन-पालन से लेकर शिक्षा और जीवन जीने के सभी आयामों में लड़कों जैसी ही सुविधाएं दी जाएं। समाज को भी चाहिए कि महिला खेलों के प्रति उनकी रुचि को बाजार की ताकतें प्रभावित न कर सकें। ये ताकतें आर्थिक कारणों से किसी खेल को प्रमोट करती हैं लेकिन अगर लोग महिला क्रिकेट या हॉकी या ट्रैक एंड फील्ड स्पर्धाएं उसी रुचि से देखने लगेंगे, जिस रुचि से पुरुष क्रिकेट को देखते हैं, तो बाजार इन्हें दिखाने में भी दिलचस्पी लेगा।

Date:02-03-24

चुनावों में एआई के दुरुपयोग को रोकना जरूरी हो गया है

विराग गुप्ता, (गुप्ता कोर्ट के वकील 'अनमास्किंग वीआईपी' पुस्तक के लेखक)

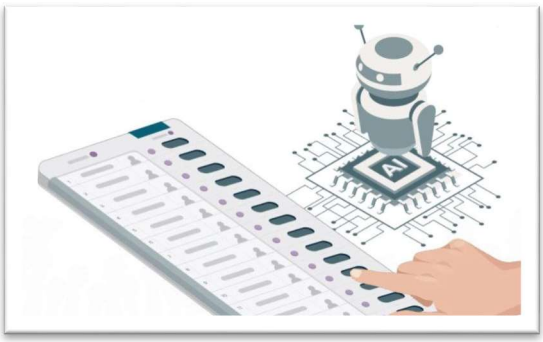

राहुल गांधी ने कहा है कि बेरोजगारी की वजह से युवा वर्ग मोबाइल की लत का शिकार है बेकारी की वजह से मोबाइल की लत है या मोबाइल की वजह से बेकारी? यह मुर्गी पहले या अंडा की तरह ही यक्ष प्रश्न है। लेकिन करोड़ों मोबाइल और आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस (एआई) के लक्षित प्रचार से वोटरों को ट्रैप करके चुनावों को प्रभावित करने पर कोई बहस नहीं हो रही कर्तव्यों के रस्मी निर्वहन के लिए डिजिटल पर्यवेक्षकों की नियुक्ति के बारे में चुनाव आयोग ने निर्णय लिया है। लेकिन उससे चुनाव को हाइजैक करने पर कैसे रोक लगेगी? परम्परागत लुट से बचाने

के लिए सड़कों पर पुलिस की तैनाती होती है। लेकिन विदेश से कोई व्यक्ति ऑनलाइन तरीके से बैंकों में डिजिटल लूट को अंजाम दे दे तो चौराहे के पुलिस बंदोबस्त को ब्रेकिंग न्यूज से ही खबर मिल सकेगी। चुनावों में एआई के प्रभावी नियमन के लिए मर्ज से जुड़े पांच बड़े पहलुओं की समझ जरूरी है:

1. ऑनलाइन बर्ताव और सोशल मीडिया में गतिविधियों से टेक कम्पनियां करोड़ों लोगों का डेटा गैर-कानूनी तरीके से इकट्ठा करके उनकी प्रोफाइलिंग करती हैं। सभी पार्टियों के नेता इस डेटा के आधार पर मतदाताओं को टारगेट करने के लिए फर्जी मैसेज भिजवाते हैं। विरोधी नेता और पार्टी की छवि को खराब करने के लिए डीपफेक के माध्यम से झूठी कहानियां गढ़ने और फर्जी वीडियो बनाने का भी धंधा होता है। इन खबरों को वायरल करने के लिए फर्जी खातों के साथ सोशल मीडिया बॉट्स का इस्तेमाल बढ़ने लगा है।

2. कुछ साल पहले विदेश की कैम्ब्रिज एनालिटिका कम्पनी ने फेसबुक के करोड़ों प्रोफाइल से डेटा लेकर भारत के चुनावों को प्रभावित करने की कोशिश की थी। हाल ही में बांग्लादेश और इंडोनेशिया के चुनावों में बड़े पैमाने पर एआई का दुरुपयोग हुआ। इस साल भारत और अमेरिका समेत दुनिया के 50 से ज्यादा देशों के चुनावों पर एआई की संगीन चुनौती है। मेटा कम्पनी ने ईयू के चुनाव में एआई के दुरुपयोग को रोकने के लिए विशेष दस्तों का गठन किया है। लेकिन भारत में इस बारे में सिर्फ सतही प्रयास हो रहे हैं। 2013 में हमारे प्रतिवेदन के बाद सोशल मीडिया को रेगुलेट करने के लिए चुनाव आयोग ने जिन नियमों को बनाया था, उन्हें ही अभी तक प्रभावी तरीके से लागू नहीं किया गया।

3. माइक्रोसॉफ्ट ने जेनरेटिव एआई पर दांव खेलकर मार्केट कैप में 82 लाख करोड़ से ज्यादा की बढ़ोतरी करके एपल को मात दे दी है। बड़े मुनाफे की होड़ में टेक कम्पनियां एआई के दुरुपयोग और फेक न्यूज को बढ़ावा देकर लोकतंत्र को हाईजैक करने का प्रयास कर रही हैं। एक अध्ययन के अनुसार चैट जीपीटी 4, जेमिनी क्लाउड, लामा-2 और मिक्स्ट्रल जैसे पांच बड़े एआई प्लेटफॉर्मों ने सवालों के गलत और अधूरे जवाब दिए। भारत का पहला एआई यूनिकॉर्न कृत्रिम भी खुद के ही आकलन के अनुसार राजनीतिक तौर पर निष्पक्ष नहीं है। अधूरी जानकारियों और गलत एल्गोरिदम से लैस प्लेटफॉर्मों के माध्यम से भ्रामक मुद्दों, गलत तथ्यों और नकली रुझानों से चुनावी लहर के लिए एआई का इस्तेमाल हो सकता है।

4. रश्मिका मंदाना मामले में डीपफेक पर बड़ी बहस शुरू होने पर पुलिस ने खुद ही एफआईआर दर्ज करके आरोपियों को गिरफ्तार कर लिया। लेकिन प्रधानमंत्री मोदी के गरबा वाले गलत वीडियो पर कोई मामला दर्ज नहीं हुआ। अभी जेमिनी एआई टूल पर प्रधानमंत्री के खिलाफ गलतबयानी पर मंत्री महोदय ने आईटी नियमों के तहत गूगल के खिलाफ कार्रवाई का संकेत दिया। लेकिन डिजिटल दुनिया फेक न्यूज और साइबर अपराधों से पीड़ित लोगों का कोई ठौर नहीं एक रिपोर्ट के अनुसार पिछले दो सालों में मेटा, अल्फाबेट और ट्विटर की सिर्फ तीन कम्पनियों ने स्वतः तरीके से लगभग 213 करोड़ आपत्तिजनक खातों और कंटेंट के खिलाफ कार्रवाई की है। जबकि एनसीआरबी के आंकड़ों के अनुसार पूरे देश में साल भर में सिर्फ 65,893 साइबर अपराध दर्ज हुए।

5. 2021 के आईटी नियमों के तहत टेक कम्पनियों में नियुक्त शिकायत अधिकारी का काम जनता की शिकायतों का निराकरण करना है। लेकिन पुलिस, सुरक्षा एजेंसियों, चुनाव आयोग और सरकार के आदेशों के पालन के लिए 2009 के आईटी नियमों के तहत टेक कम्पनियों में नामांकित अधिकारियों की नियुक्ति का प्रावधान है सोशल मीडिया, इंटरनेट,

टेलीकॉम और एआई से जुड़ी सभी कम्पनियों के निर्दिष्ट अधिकारियों का ब्योरा चुनाव आयोग द्वारा नियुक्त पर्यवेक्षकों के पास भेजने की जरूरत है।

दैनिक जागरण

Date:02-03-24

कठिन होता वैवाहिक रिश्तों का निर्वाह

डॉ ऋतू सारस्वत, (लेखिका समाजशास्त्री है)

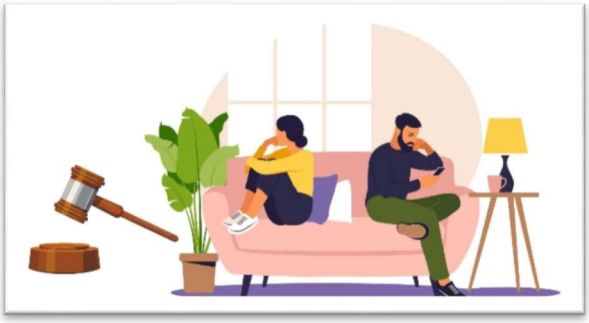

सपने देश में पति-पत्नी के रिश्तों में दरार के मामले तेजी से बढ़ रहे हैं। हाल के एक आंकड़े के अनुसार 2021 में देश भर की पारिवारिक अदालतों में विवाह विच्छेद के जो मामले करीब पांच लाख थे, वे 2023 में बढ़कर आठ लाख से अधिक हो गए आंकड़ों के अनुसार फैमिली कोर्ट में जितने मामले निपटाए जाते हैं, उतने ही नए दर्ज हो जाते हैं। तलाक के बढ़ते मामले एक बड़े सामाजिक बदलाव की और इशारा कर रहे हैं। क्या संबंध विच्छेद के बढ़ते मामलों को सिर्फ व्यक्तिगत निर्णय मानना उचित होगा? क्या यह जरूरी नहीं कि उन नकारात्मकताओं पर ध्यान दिया जाए, जी सामाजिक ढांचे को ध्वस्त कर रही हैं तथाकथित आधुनिकतावादी व्यक्तिगत स्वतंत्रता की दुहाई देते हुए विवाह को एक 'संस्था' के रूप में स्वीकारने को रूढिगत विचार मानते हैं। उनका तर्क है कि जब भारत में तलाक की दर दुनिया भर में सबसे कम है तो उस पर इतना हंगामा करने की क्या जरूरत है? यकीनन भारत में संबंध विच्छेद के मामले कम हैं, परंतु जिस तौत्र गति से इनमें वृद्धि हो रही है, उससे क्या यह आशंका नहीं कि भविष्य में हम पश्चिमी देशों के बराबर खड़े हो जाएंगे? यदि ऐसा हुआ तो इसका बुरा असर समाज के साथ देश पर भी पड़ेगा। आम तौर पर संबंध विच्छेद को सबसे अधिक पीड़ा बच्चों के हिस्से में आती है। सारा मैकलानहन और गैरी सैंडफूर की पुस्तक- ग्रोइंग अप विद ए सिंगल पेरेंट व्हाट हट्स काट हेल्प्स', एकल परिवारों में पलने वाले बच्चों की त्रासदी बयान करती है। इस पुस्तक के अनुसार एकल परिवार में पले लड़कों में निष्क्रिय रहने की प्रवृत्ति होती है और लड़कियों में अवसाद एवं भटकाव की आशंका काफी अधिक बढ़ जाती है। एक शोध से पता चला है कि जिन बच्चों ने माता-पिता के तलाक का अनुभव किया है, उनके अपराधों में संलग्न होने की अधिक आशंका होती है।

विवाह एक साझा उत्तरवयित्व है। इसके लिए किसी एक पक्ष को पूर्ण रूप से दोषी ठहराना उचित नहीं होगा, परंतु इस तथ्य पर विचार करना आवश्यक हैं कि बीते कुछ दशकों में संबंधों के बिखराव के क्या कारण है? यक्ष प्रश्न यह है कि समाजिक- सांस्कृतिक पृष्ठभूमि में ऐसे क्या बदलाव आए हैं कि संबंधों का निर्वहन चुनौती बन गया है? नारीवाद की दूसरी लहर की उत्प्रेरक बेट्टी फ्रीडन की पुस्तक 'द फेमिनिन मिस्टिक' उस समाजिक व्यवस्था का विरोध करती है,

जिसमें महिलाओं की भूमिका विवाह और संतान उत्पत्ति स्वीकार की गई है। कुछ दशक पहले नारीवाद समाजशास्त्री ऐन ओकले और क्रिस्टीन डेल्फी का खास असर था विवाह को लेकर इन दोनों के विचार बहुत नकारात्मक थे। इन्होंने विवाह को पितृसतात्मक व्यवस्था के उत्पाद के रूप में देखा, जो पति द्वारा पत्नी के शेषण पर आधारित था। नारीवादियों ने तलाक की संभावना का जश्न मनाया, क्योंकि उनका मानना था कि ऐसा होने से महिलाएं पुरुषों को छोड़कर उनके नियंत्रण से 'मुक्त' हो सकती थीं पश्चिम से पनपी इस विचारधारा ने भारतीय संस्कृति में भी घुसपैठ की और परंपरागत वैवाहिक मूल्यों को कमजोर किया।

प्रायः यह तर्क दिया जाता है कि क्या महिलाएं यूं ही विवाह में प्रताड़ित और शोषित होती रहें? निश्चित ही सभ्य समाज में किसी के भी मानसिक एवं शारीरिक प्रताड़ना की जगह नहीं होनी चाहिए और ऐसे संबंधों से मुक्ति पाना अपरिहार्य भी है, परंतु प्रताड़ना की व्याख्या करना उलझा हुआ विषय है। तनिक मनमुटाव, मामूली बहस या भौतिक आकांक्षाओं की अपेक्षानुरूप पूर्ति न होना प्रताड़ना है या फिर छद्म अहं की संतुष्टि न होना? उलरिच ब्रेक और एलिजाबेथ ब्रेक गर्नशेम ने उत्तर आधुनिकतावादी समाज में रिश्तों पर व्यापक शेध किया। उनका मानना है, चूंकि लोगें के पास आर्थिक और व्यक्तिगत स्तर पर अनेक विकल्प उपलब्ध हैं, इसलिए वे सहजता से ही किसी रिश्ते से बाहर निकलने के लिए तत्पर हो जाते हैं। अमूमन विवाह विच्छेद की स्थिति में पुरुषों को ही दोषी मानने की प्रवृत्ति दृष्टिगोचर होती है और उन्हें स्वार्थी माना जाता है, परंतु क्या वाकई ऐसा है? अप्रैल 2021 में साइकोलाजिकल साइंस में प्रकाशित शोध 'सेक्स डिफरेंस इन मेल प्रेफरेंसेस एक्रास 45 कंट्रीज ए लार्ज स्केल रिप्लिकेशंस' स्पष्ट करता है कि महिलाएं विवाह में वित्तीय संसाधनों को पुरुषों की तुलना में प्राथमिकता देती हैं और ऐसे पुरुष के साथ विवाह करना चाहती हैं, जो उनकी तमाम भौतिक आवश्यकताओं को पूरा कर सकें।

आधुनिकता की कथित अग्रणी श्रेणी में खड़ी महिलाऐं परंपरागत वैवाहिक व्यवस्था का उपहास उड़ाती आई हैं। शिक्षित और आत्मनिर्भर होने की स्थिति में भी वे सुख-सुविधाओं के लिए अपने जीवनसाथी से अपेक्षा करती हैं। इस सत्य को अस्वीकार नहीं किया जा सकता कि आधुनिक समाज में लोग विवाह को एक उत्पाद मानते हैं। यदि यह उनकी अपेक्षओं को पूरा नहीं करता या कुछ और बेहतर दिखाता है, तो वे आसानी से 'छुटकारा पा लेते हैं। वैवाहिक रिश्तों में घटती सह-निर्भरता दंपतियों में अलगाव की आशंका को बढ़ा देती है। आधुनिकता के ढांचे में ढलता समाज सह निर्भरता को हेय दृष्टि से देखता है, परंतु रिश्तों के स्थायित्व के लिए यह आवश्यक है। वैयक्तिक हितों को प्राथमिकता और जीवनसाथी के हितों के प्रति असंवेदनशीलता वैवाहिक संबंधों को पीड़ाजनक बना देती है। विवाह कोई रणक्षेत्र नहीं है, जहां प्रतिस्पर्धा हो या फिर एक-दूसरे को परास्त करने के लिए साम, दाम, दंड, भेद की रणनीति अपनाना आवश्यक हो यह दायित्व, समर्पण और त्याग की आधार भूमि पर खड़ी होने वाली संस्था है संबंधों का बाजारीकरण न आने वाली पीढ़ियों के लिए बेहतर है, न समाज और देश के लिए।

राष्ट्रीय सहारा

Date:02-03-24

रोक मतलब रोक

संपादकीय

सर्वोच्च न्यायालय की संविधानिक पीठ ने स्पष्ट कर दिया है कि किसी मामले पर स्टे (रोक) का मतलब स्टे होगा । यह छह महीने में अपने आप समाप्त नहीं हो जाएगा। कोर्ट ने 2018 में दिए गए अपने ही फैसले को 'प्राकृतिक न्याय' के विरुद्ध मानते हुए उसे पलट दिया है। तब कहा गया था कि स्टे देने वाली कोर्ट एक निश्चित अवधि में उस मामले की सुनवाई नहीं करती है। तो स्टे छह महीने बाद स्वतः समाप्त हो जाएगा। ऐसी स्थिति में वादी के न्याय पाने मौलिक अधिकार का हनन हो जाता था जबकि प्रतिवादी को कोर्ट की व्यस्ततम परिस्थिति का अनुचित लाभ मिल जाता था। पिछले साल मुख्य न्यायाधीश डीवाई चंद्रचूड़ का ध्यान इस ओर गया और उन्होंने मामले को पांच सदस्यीय संविधान पीठ को सौंप दिया था, जिसमें वे खुद भी शामिल थे।

बृहस्पतिवार को इसी संविधान पीठ ने स्थगन आदेश देने वाले संबद्ध उच्च न्यायालयों को प्राथमिकताओं के आधार पर मामले के निबटारे की अवधि का स्वविवेक के आधार पर निर्धारण करने का भी अधिकार दिया। इसमें इसे न्यायालय की परिस्थितियों पर निर्भर करना खास बात है। इसका फायदा वादी को यह होगा कि न्याय पाने के उसके अधिकार पर कुठाराघात नहीं होगा। लंबित मुकदमों और अन्यान्य वजहों से किसी मामले पर त्वरित सुनवाई नहीं हो पाती है तो इसका नुकसान वादी या अन्य पक्षों को नहीं होने दिया जा सकता। क्या इससे मुकदमे के निबटारे में देरी को प्रोत्साहन नहीं मिलेगा, जबकि खुद सर्वोच्च न्यायालय का जोर त्वरित निष्पादन पर रहा है? ताजा फैसले की आड़ में कुछ न्यायाधीश भी निश्चिंत हो सकते हैं। लंबित मामलों के लिए पक्षकार या वकील ही जिम्मेदार नहीं हैं। बहुत हद तक कुछ न्यायाधीश भी जिम्मेदार होते हैं। स्वविवेक कई बार संशयग्रस्त भी हो सकता है, तब परिस्थितियां एवं उनके मुताबिक प्राथमिकता के निर्धारण का संतुलन कमजोर पड़ सकता है। स्टे कई बार वादी के विरुद्ध तो कई बार मामलों के आधार पर - प्रतिवादी के पक्ष में भी होता है। इसलिए निष्पादन ही अंतिम और अनिवार्य न्याय है। यहां ज्ञानव्यापी मामला उदाहरण है। इस पर लगा स्टे न्यायहित में नहीं था, जैसा कि वहां हुए सर्वेक्षण में मिले तथ्यों से जाहिर हुआ। इस मामले में स्टे की मियाद समाप्त होने के बाद निचली अदालत में फिर से सुनवाई की गई थी। अब नये फैसले की रोशनी में उस पर सुनवाई जारी रहने पर संकट है।